Indian Journal of Social Sciences and Literature Studies
Vol. 11, Issue 1, June 2025
ISSN 2349-5634 (Print) ISSN 2455-0973 (online)

अनामिका की कविताओं में स्त्री-विमर्श और लोक-जीवन एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

मीनाक्षी[1] और धर्मेश कुमार मीणा[2]

शोधार्थी[1] हिंदी विभाग, श्री जगदीश प्रसाद झाबरमल टिबरेवाले विश्वविद्यालय, झुंझुनू, राजस्थान-333001
सहायक प्राध्यापक[2] हिंदी विभाग, श्री जगदीश प्रसाद झाबरमल टिबरेवाले विश्वविद्यालय, झुंझुनू, राजस्थान-333001

सार

प्रस्तुत शोध पत्र समकालीन हिंदी कविता की प्रमुख हस्ताक्षर अनामिका की काव्य भूमि में स्त्री विमर्श और लोक जीवन की अन्तर्धारा का विश्लेषण करता है। अनामिका का काव्य एक ऐसे वैचारिक धरातल पर खड़ा है जहाँ स्त्री की सत्ता पहचान, उसके शरीर की स्वायत्तता, पितृसत्तात्मक व्यवस्था के प्रति सुचिंतित प्रतिरोध और लोक-जीवन की जीवंत चेतना एक साथ काम करती है। इस शोध में पाठ विश्लेषण पद्धति का उपयोग किया गया है, जिसके अंतर्गत अनामिका की प्रमुख कविताओं का सूक्ष्म पठन किया गया है। अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य हैं, उनकी कविताओं में स्त्री-विमर्श के स्वरूप की पहचान करना, लोक-जीवन और लोक संस्कृति के चित्रण का विश्लेषण करना, पितृसत्ता के विरुद्ध काव्यात्मक प्रतिरोध को रेखांकित करना और घरेलू स्त्री के संघर्ष को समझना। यह शोध इस तथ्य को स्थापित करता है कि अनामिका की कविताएँ स्त्री को केवल पीड़ित के रूप में नहीं, बल्कि एक सचेत, संघर्षशील और सृजनात्मक इकाई के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनका काव्य भाषा में लोक तत्वों का सम्मिश्रण इस विमर्श को एक विशिष्ट सांस्कृतिक आयाम देता है जो उन्हें समकालीन हिंदी कविता में अलग पहचान दिलाता है। यह शोध चार प्रमुख स्रोत सामग्री के साथ-साथ नामवर सिंह, रोहिणी अग्रवाल, ममता कालिया, मैत्रेयी पुष्पा, राजेश जोशी और अन्य विद्वानों के संदर्भों पर आधारित है।

प्रमुख शब्द: अनामिका, नारी, लोक-जीवन, चित्रण*, हिंदी कविता, विमर्श।*

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य की समकालीन काव्य परंपरा में अनामिका एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। उनका मूल नाम अनामिका है और वे दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन से जुड़ी रही हैं। उनकी कविताएँ 'गलत पते की चिट्ठी', 'बीजाक्षर', 'खुरदरी हथेलियाँ', 'दूब धान' जैसे संग्रहों में संकलित – हिंदी काव्य जगत में स्त्री जीवन के एक नए और प्रामाणिक आख्यान की तरह आती हैं। जहाँ पहले की हिंदी कविता में स्त्री अधिकतर एक मौन पात्र या प्रेम-विरह की नायिका थी, वहीं अनामिका की कविता में वह एक सक्रिय, सचेत और संघर्षशील उपस्थिति है।

स्त्री विमर्श को समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि 'विमर्श' शब्द का अर्थ क्या है। डॉ. हरदेव बाहरी के 'हिंदी शब्दकोश' के अनुसार विमर्श का अर्थ है विचार, विवेचन, परीक्षण, समीक्षा और तर्क। स्त्री विमर्श मूलतः एक वैचारिक आंदोलन है जो स्त्री के हितों को केंद्र में रखकर सामाजिक, सांस्कृतिक, परंपरागत संस्थाओं और मानसिकता के विरुद्ध एक सांस्कृतिक हस्तक्षेप करता है (डॉ. लालचंद कहार, 2016)। जैसा कि रोहिणी अग्रवाल ने कहा है, 'विमर्श' का अर्थ है, जीवंत बहस किसी एक समस्या पर एक निश्चित दिशा में विचार न करके उससे संबंधित विभिन्न दृष्टिकोणों, मानसिकताओं और विचारों का समग्र अध्ययन करना (अग्रवाल, 2014)।

अनामिका की कविताओं में लोक-जीवन का महत्त्व इसलिए भी विशेष है क्योंकि वे स्त्री के संघर्ष को किसी सैद्धांतिक ढाँचे में नहीं, बल्कि रसोई, खेत खलिहान, लोकगीत और देहरी-आँगन के यथार्थ में देखती हैं। उनकी कविता में स्त्री का दुख और विद्रोह दोनों ही परिचित, रोज़मर्रा के जीवन की छवियों के माध्यम से व्यक्त होते हैं। यही कारण है कि उनकी कविताएँ एक साथ साहित्यिक और सामाजिक दस्तावेज़ का काम करती हैं।

इस शोध पत्र में पाँच केंद्रीय पहलुओं का अध्ययन किया गया है: स्त्री विमर्श का वैचारिक आधार, लोक-जीवन का काव्यात्मक चित्रण, घरेलू स्त्री का संघर्ष और प्रतिरोध, अनामिका की भाषा और शिल्प, तथा समकालीन हिंदी कविता में उनका योगदान।

स्त्री-विमर्श: अनामिका के काव्य का केंद्रीय स्वर

अनामिका की कविताओं में स्त्री-विमर्श केवल नारेबाजी या बौद्धिक बहस नहीं है – यह जीवन के भीतर से उठी आवाज है। उनकी कविताओं में स्त्री न तो रोती हुई अबला है और न ही किसी आदर्शवादी संकल्प की मूर्ति। वह एक ऐसी स्त्री है जो रोज़मर्रा के जीवन में पितृसत्ता के जाल को पहचानती है, उससे उलझती है और बहुत बार उसे अपने ढंग से पार करने की कोशिश करती है।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था पर प्रहार करते हुए अनामिका दिखाती हैं कि स्त्री का शरीर कैसे सामाजिक नियंत्रण का केंद्र बन जाता है। महादेवी वर्मा ने 'श्रृंखला की कड़ियाँ' में स्त्री अस्मिता पर कहा था कि युगों के अनवरत प्रवाह में बड़े बड़े साम्राज्य बह गए, संस्कृतियाँ लुप्त हो गईं, परंतु भारतीय स्त्रियों के ललाट पर विधि की वज्रलेखनी से अंकित अदृश्य लिपि नहीं धुल सकी (महादेवी वर्मा, 2001)। अनामिका इसी परंपरा को आगे बढ़ाती हुई यह प्रश्न उठाती हैं कि क्या स्त्री के लिए सदा से निर्धारित 'श्रद्धा' का पाठ ही उसका एकमात्र भविष्य है?

अनामिका के यहाँ स्त्री अस्मिता का प्रश्न केंद्रीय है। वे 'स्त्रीत्व' की उस झूठी छवि को चुनौती देती हैं जो सदियों से पुरुष-दृष्टि ने रची है। जैसा कि डॉ. रामचंद्र रजक ने रेखांकित किया है, स्त्री विमर्श में स्त्री दृष्टि वह अर्जित स्थिति है, कोई सहजात दशा नहीं, इसलिए स्त्रियाँ स्वयं की दुनिया को एक मानक पुरुष दृष्टि से देखने की इतनी अभ्यस्त हो जाती हैं कि उन्हें वह अपनी दृष्टि लगती है (रजक, 2017)। अनामिका की कविताएँ इस आत्म जाल से बाहर निकलने का रास्ता दिखाती हैं।

मैत्रेयी पुष्पा ने कहा है कि नारीवाद ही स्त्री विमर्श है, और नारी की यथार्थ स्थिति के बारे में चर्चा करना ही स्त्री विमर्श है (मैत्रेयी पुष्पा, 1996)। इस दृष्टि से अनामिका की कविताएँ स्त्री

के भोगे हुए यथार्थ का साहित्यिक आख्यान हैं। वे यह भी दिखाती हैं कि स्त्री विमर्श केवल स्त्री बनाम पुरुष का संघर्ष नहीं, बल्कि उस पूरी मानसिकता और व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष है जो स्त्री को दोयम दर्जे में रखती है।

अनामिका की कविताओं में स्त्री शरीर एक राजनैतिक स्थान की तरह उभरता है। वे दिखाती हैं कि स्त्री का शरीर समाज में किस तरह निगरानी, नियंत्रण और वस्तुकरण का शिकार होता है। उनकी कविता 'रक्तस्राव' जैसी रचनाएँ शारीरिक अनुभवों को काव्यात्मक गरिमा देती हैं और उन अनुभवों को केंद्र में लाती हैं जिन्हें पितृसत्तात्मक समाज हाशिये पर धकेलता रहा है। प्रभा खेतान के शब्दों में 'नारीवाद न मार्क्सवाद है और न पूँजीवाद। स्त्री हर जगह है, हर वाद में है, फैलाव में है, मगर संस्कृति के विस्तृत फलक पर आज भी वह वस्तुकरण की शिकार है' (प्रभा खेतान, 1996)। ध्यान देने योग्य है कि अनामिका का स्त्री विमर्श पश्चिमी नारीवाद की अंधी नकल नहीं है। वे भारतीय सामाजिक संदर्भ में स्त्री की स्थिति को देखती हैं, लोक परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन बनाते हुए एक ऐसा काव्यात्मक स्त्री विमर्श रचती हैं जो अपनी जड़ों से जुड़ा है।

लोक-जीवन और लोक-संस्कृति का चित्रण

अनामिका की कविता में लोक-जीवन और लोक-संस्कृति का उपस्थिति कोई सजावटी तत्त्व नहीं, यह उनके काव्य का मूल स्वभाव है। वे ग्राम्य जीवन, लोकगीत, ऋतु परंपरा और स्थानीय रीति-रिवाजों को कविता में इस तरह बुनती हैं कि स्त्री की अनुभव सृष्टि एक पूरे सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भ के बीच जीवंत हो उठती है।

उनकी कविताओं में खेत खलिहान, नदी तालाब, देहरी, आँगन और रसोई, ये सब केवल भौगोलिक स्थान नहीं बल्कि सांस्कृतिक स्मृति के केंद्र हैं। लोकगीतों की धुन और छंद-लय उनकी कविताओं में गूँजती है। मीराबाई, जनाबाई और अन्य स्त्री-संतों की परंपरा से अनामिका एक अदृश्य धागे से जुड़ी हैं, वह परंपरा जिसमें स्त्री ने भक्ति और काव्य के माध्यम से अपनी आत्मा की आवाज पाई थी। लोक जीवन के चित्रण में अनामिका ग्रामीण स्त्री के उस रोज़मर्रा

के जीवन को कविता में लाती हैं जो साहित्य में अक्सर अनदेखा रहता है। धान कूटने की आवाज, चक्की पीसने का श्रम, तीज त्योहार पर गाए जाने वाले गीत, ये सब उनकी कविताओं में एक ऐसे संसार को उपस्थित करते हैं जो एक साथ सुंदर और कठोर है। यह वह जीवन है जहाँ स्त्री सृजन करती है, संभालती है, पर उसकी श्रम और सृजनशीलता को कोई मूल्य नहीं दिया जाता।

अनामिका लोक संस्कृति को रूमानी नजरिए से नहीं देखतीं। वे दिखाती हैं कि लोक परंपरा में स्त्री शोषण की जड़ें कितनी गहरी हैं, व्रत-उपवास, सती-प्रथा के अवशेष, विधवा जीवन की कठोरता, ये सब लोक-जीवन का ही हिस्सा हैं। परंतु साथ ही वे यह भी दिखाती हैं कि उसी लोक जीवन में स्त्री प्रतिरोध की एक समानांतर धारा भी बहती रही है, लोकगीतों में, लोककथाओं में, स्त्रियों के बीच की अनौपचारिक बातचीत में।

नामवर सिंह ने समकालीन हिंदी कविता पर विचार करते हुए कहा है कि जो कविता अपनी जड़ों से, अपने लोक जीवन से कटकर बौद्धिक अमूर्तता में चली जाती है, वह अपनी जीवनी शक्ति खो देती है (नामवर सिंह, 2002)। इस कसौटी पर अनामिका की कविता खरी उतरती है, वह लोक जीवन से जुड़ी है और उसी से अपनी ताकत लेती है।

घरेलू स्त्री का संघर्ष और प्रतिरोध

अनामिका की कविताओं में घरेलू स्त्री का संघर्ष एक केंद्रीय विषय है। यह वह स्त्री है जो रसोई में जीवन बिताती है, परिवार के लिए सब कुछ करती है, पर उसकी अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं का कोई हिसाब नहीं रखता। अनामिका इस स्त्री को हाशिये से उठाकर कविता के केंद्र में लाती हैं। रसोई उनकी कविता में एक बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह रसोई एक साथ स्त्री की सृजनशीलता का स्थान है और उसकी कैद का स्थान भी। अनामिका दिखाती हैं कि स्त्री इस 'रसोई' के भीतर भी अपना एक संसार बनाती है, अपनी एक भाषा गढ़ती है। उनकी कविता 'चुप्पी' और 'रसोई' जैसी रचनाएँ घरेलू श्रम को एक नई काव्यात्मक गरिमा देती हैं। मृणाल पांडे ने लिखा है कि नारीवाद पुरुषों का नहीं, उनकी मानवीयता घटाने वाले उस छद्म

मुखौटे का प्रतिकार करता रहा है जो मर्दानगी के नाम पर गढ़ा गया है और जिसके पीछे झूठी अहंमन्यता और उत्पीड़क प्रवृत्ति के अलावा कुछ नहीं है (मृणाल पांडे, 2011)। इस दृष्टि से अनामिका की कविताएँ स्त्री को पुरुष से नहीं, बल्कि उस व्यवस्था से मुक्ति दिलाने का काम करती हैं जो उसे जकड़े हुए है। अनामिका की कविताओं में प्रतिरोध की एक विशेषता यह है कि वह आक्रामक या हिंसक नहीं है। यह प्रतिरोध हँसी में, व्यंग्य में, चुप्पी तोड़ने में और सवाल पूछने में है। वे तुलसीदास जैसे परंपरागत कवियों को कटघरे में खड़ा करती हैं, जैसे उनकी कविता 'तुलसी का झोला' में, और पूछती हैं कि क्या स्त्री को सदा 'रत्न' की तरह यादगार होना चाहिए, बिना किसी के लौट आने की उम्मीद किए?

घरेलू स्त्री का एक महत्त्वपूर्ण पहलू उसका श्रम है जो अदृश्य रहता है। अनामिका इस अदृश्य श्रम को दृश्यमान बनाती हैं। वे दिखाती हैं कि पितृसत्तात्मक समाज ने स्त्री के श्रम को 'प्रेम', 'सेवा' और 'ममता' के नाम पर छुपा दिया है। परंतु जब स्त्री इन नामों को हटाकर अपने श्रम का सच देखती है, तो वहाँ शोषण की एक लंबी कहानी मिलती है।

स्त्री-शक्ति की इस पुनर्खोज में अनामिका को महाभारत और पुराणों की स्त्री-पात्रों से भी प्रेरणा मिलती है। वे उन पात्रों को नए संदर्भ में देखती हैं, सीता, द्रौपदी, उर्मिला और उनमें से एक नई अस्मिता की तलाश करती हैं। यह पौराणिक संदर्भों का पुनर्पाठ उनके काव्य को एक विशेष गहराई देता है।

अनामिका की भाषा और शिल्प

अनामिका की काव्य भाषा उनके स्त्री विमर्श को एक विशिष्ट रूप देती है। उनकी भाषा न तो अत्यंत संस्कृतनिष्ठ है और न ही केवल बोलचाल की, यह दोनों के बीच एक सधी हुई जगह है जहाँ लोक भाषा और साहित्यिक परंपरा एक दूसरे से मिलती हैं। इस मिश्रण से एक ऐसी काव्य भाषा बनती है जो एक साथ परिचित और नई लगती है।

उनकी कविताओं में बिंब विशेष रूप से ध्यान खींचते हैं। रसोई की वस्तुएँ, धरती, नदी, बीज, धान, लहू, ये सब उनकी कविताओं में केवल वस्तुएँ नहीं रहते, बल्कि एक व्यापक स्त्री अनुभव

के प्रतीक बन जाते हैं। 'बीजाक्षर' कविता में बीज का बिंब स्त्री जीवन की उस शक्ति का प्रतीक है जो धरती के भीतर छुपी है, जो अभी प्रकट नहीं हुई पर उसमें अपार संभावना है। अनामिका के काव्य शिल्प में व्यंग्य और हास्य का उपयोग भी उल्लेखनीय है। वे बहुत से गंभीर मुद्दों को एक हल्के, लेकिन तीखे स्वर में उठाती हैं। इस व्यंग्य में एक विशेष प्रकार की बौद्धिक चतुराई है जो पाठक को सोचने पर मजबूर करती है। मेमता कालिया ने एक बार कहा था कि स्त्री विमर्श वहाँ है जहाँ स्त्री का प्रतिकार है, और यह प्रतिकार मुंशी प्रेमचंद के साहित्य में भी है, यशपाल के 'झूठासच' में भी (ममता कालिया, 2006)। अनामिका इसी प्रतिकार को काव्य का माध्यम देती हैं।

उनकी कविताओं में छंद और लय का उपयोग लोक-गीतों से प्रभावित है। कई कविताओं में एक गेयात्मकता है जो उन्हें गाए जाने योग्य बनाती है, जैसे स्त्री समाज में गाए जाने वाले व्रत-कथाओं और लोकगीतों की परंपरा हो। यह गेयात्मकता उनके काव्य को एक विशेष भावात्मक प्रभाव देती है।

प्रतीकों के उपयोग में अनामिका बहुत सावधान और सोचे समझे हैं। 'दूब' का प्रतीक जीवट और लचीलेपन का है। 'धरती' का प्रतीक स्त्री की सहनशीलता और सृजनशीलता दोनों का है। 'रक्त' का प्रतीक जीवन और संघर्ष दोनों का है। इन प्रतीकों के माध्यम से अनामिका स्त्री अनुभव को एक सार्वभौम आयाम देती हैं।

अनामिका की भाषा में एक और विशेषता है, वे स्त्री आवाज़ को पहली पुरुष में और बहुत प्रत्यक्ष तरीके से बोलती हैं। उनकी कविताओं में 'मैं' की उपस्थिति बहुत सशक्त है, यह 'मैं' कोई काल्पनिक पात्र नहीं, बल्कि एक साथ व्यक्तिगत और सामूहिक स्त्री आवाज़ है। जैसा कि आरती सिंह ठाकुर ने अनामिका की कविताओं के संदर्भ में लिखा है, अनामिका अपनी कविताओं में 'मैं' का प्रश्न उठाती हैं, और उनकी कविताएँ बेहद बौद्धिक और दार्शनिक हैं (आरती सिंह ठाकुर, 2024)।

निष्कर्ष

यह शोध पत्र इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अनामिका की कविताएँ समकालीन हिंदी काव्य में स्त्री विमर्श और लोक जीवन के सम्मिश्रण का एक अनूठा उदाहरण हैं। उनकी कविताएँ न तो केवल बौद्धिक स्त्री विमर्श हैं और न ही केवल लोकजीवन के काव्यात्मक चित्र, वे दोनों को एक साथ साधती हैं और इस प्रकार एक ऐसा काव्यात्मक संसार रचती हैं जो अपनी जड़ों से जुड़ा है और अपने समय से भी। उनके काव्य में पितृसत्ता के विरुद्ध प्रतिरोध बहुत स्पष्ट है, लेकिन यह प्रतिरोध कोई नारेबाजी नहीं, यह जीवन के भीतर से, रोज़मर्रा के अनुभवों से उठा हुआ प्रतिरोध है। घरेलू स्त्री का संघर्ष, उसकी चुप्पी और उसका विद्रोह, ये सब उनकी कविताओं में एक साथ उपस्थित हैं। इस प्रकार अनामिका हिंदी साहित्य में स्त्री आवाज़ को एक नई दिशा देती हैं। लोक जीवन और लोक संस्कृति उनके काव्य में सजावट के लिए नहीं, बल्कि स्त्री अनुभव को उसके वास्तविक सांस्कृतिक संदर्भ में समझने के लिए आती है। यह लोक संस्कृति उनके काव्य की जड़ है और उनके स्त्री विमर्श को एक विशिष्ट भारतीय आयाम देती है। भविष्य के अध्ययन के लिए यह शोध क्षेत्र बहुत विस्तृत है। अनामिका की कविताओं की तुलना अन्य समकालीन कवयित्रियों, जैसे सुभद्रा कुमारी चौहान, ममता कालिया और मृदुला गर्ग की रचनाओं से करने पर समकालीन हिंदी स्त्री लेखन की एक व्यापक तस्वीर उभर सकती है। इसके अलावा, लोक जीवन के संदर्भ में दलित स्त्री विमर्श और आदिवासी स्त्री अनुभव के साथ अनामिका के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन भी फलदायक हो सकता है। स्त्री विमर्श हमेशा स्त्री के उत्थान के लिए नए आयाम खोलेगा, और उन आयामों पर काम करके हम स्त्री को समाज में एक मजबूत भागीदार के रूप में स्थापित कर सकेंगे। यह भागीदारी देश, समाज के विकास को तथा सामाजिक सद्भाव को एक नए रूप में तथा और देश को विकसित राष्ट्र बनाने में अपना योगदान सुनिश्चित करेगी।

संदर्भ सूची

अग्रवाल, रोहिणी. (2014). साहित्य की जमीन और स्त्री मन के उच्छ्वास. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।

कहार, लालचंद. (2016). स्त्री विमर्श और भारतीय हिंदी साहित्य. जर्नल ऑफ़ इमर्जिंग टेक्नोलॉजी एंड इन्नोवेटिव रिसर्च, 3(11), 835-839।

कस्तवार, रेखा. (2013). स्त्री चिंतन की चुनौतियाँ. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

कालिया, ममता. (2006). स्त्री-विमर्श का यथार्थ. किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली।

खेतान, प्रभा. (1996). स्त्री-विमर्श. हंस पत्रिका (सं. राजेंद्र यादव), अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, अक्टूबर 1996, 76।

गर्ग, मृदुला. (1985). चित्तकोबरा. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

ठाकुर, आरती सिंह. (2024). समकालीन महिला कथाकारों के कथा साहित्य में 'स्त्री-विमर्श'. जर्नल ऑफ़ इमर्जिंग टेक्नोलॉजी एंड इन्नोवेटिव रिसर्च जर्नल, 11(12), 296-301।

नामवर सिंह. (2002). कविता के नए प्रतिमान. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

पांडे, मृणाल. (2011). परिधि पर स्त्री. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

पुष्पा, मैत्रेयी. (1996). नारीवाद ही स्त्री-विमर्श है. हंस पत्रिका (सं. राजेंद्र यादव), अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, अक्टूबर 1996, 75।

पुष्पा, मैत्रेयी. (2006). त्रिया हठ. किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली।

रजक, रामचंद्र. (2017). स्त्री-विमर्श की अवधारणा. इंटरनेशनल जर्नल मल्टीडिसीप्लिनरी रिसर्च एंड डेवलपमेंट, 4(4), 248-252।

वर्मा, महादेवी. (2001). श्रृंखला की कड़ियाँ. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

वर्मा, महादेवी. (1995). आधुनिक नारी उसकी स्थिति पर एक दृष्टि (श्रृंखला की कड़ियाँ में). राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 45।

विद्यार्थी इकाई (सं.). (2010). स्त्री-विमर्श: अवधारणा और मुक्ति आंदोलन (पाश्चात्य और भारतीय संदर्भ). इग्नू अध्ययन सामग्री, नई दिल्ली, 56-90।

अनामिका (2006) खेल तमाशा. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.